कवि घनानन्द के काव्य में विरह

डॉ. ओमवीर सिंह
हिन्दी विभाग
विवेकानन्द कॉलिज, दिल्ली

सारांशिका

घनानन्द के सम्पूर्ण काव्य को देखा जाए तो अधिकांशतः संयोग का वर्णन स्मरण के रुप में ही आया है जबकि वियोग वर्णन में कवि को अधिक सफलता मिली है। वस्तुतः प्रेम विरह की सभी दशाओं का वर्णन कवि ने अपने काव्य में बहुत ही तन्मयता के साथ किया है जिसमें कहीं भी संदेह नहीं है यद्यपि इन्होंने संयोग और वियोग दोनों पक्षों को लिया है पर वियोग की अन्त–दर्शाओं की ओर ही ध्यान अधिक है। इसी से इनके वियोग वर्णन के पद्य ही अधिक प्रसिद्ध हैं। कवि ने आन्तरिक वेदना का चित्रण बड़ी चतुराई के सथ किया है क्योंकि विरह–वर्णन की अधिकतर अन्तर्वृत्ति बनती है जबकि बाह्य दशा नहीं बनती है। घनानन्द ने न तो बिहारी की तरह विरह ताप बाहर से नाप तौल की है और न उन्होने बाहरी उछल–कूद दिखाई है। इसीलिए जो कुछ हलचल है वह भीतर ही है, बाहर से वह विरह गम्भीर है।

कवि घनानन्द के काव्य में विरह–वर्णन अद्वितीय है।

मुख्य शब्दः रीतिकाल, प्रेमानुभूति, स्त्री, सौन्दर्य, वर्णन

रीतिकालीन काव्य के अन्तर्गत देखा जाए तो कवि घनानन्द का स्थान बड़ा प्रमुख है क्योंकि इन्होने प्रेमानुभूति को आत्मसत कर उसकी पीड़ा को काव्य में अभिव्यक्त किया है। वह रीतिकालीन परम्परा से बंधे नहीं है। इसीलिए रीतिकाल की रीति मुक्त काव्य धारा के प्रतिनिधि कवि भी कहे जाते हैं। कवि घनानन्द प्रेम की पीर के अनन्य साधक है। इसी कारण उनका काव्य प्रेम की पीड़ा का दिग्दर्शन कराता है। इसीलिए घनानन्द के कविताओं का संग्रह करने वाले ब्रज नाथ ने उनके सम्बन्ध में उचित ही कहा है –

'जोग–वियोग की रीति में कोविद, भावना भेद स्वरुप को ठानै।

चाह के रंग में भीज्यौ हियौ, बिछुरे मिले प्रीतम साँति न मानै।।

कवि घनानन्द के जीवन की सबसे अधिक प्रेमानुभूति स्त्री श्रृंगार सौन्दर्य की रही है श्रृंगार सौन्दर्य के दोनों ही पक्ष संयोग एवं वियोग उनकी कविता में देखने को मिलते हैं। यहाँ ध्यान देने की बात है कि संयोग का वर्णन स्वतन्त्र रुप से वियोग की अपेक्षा कम ही आया है। घनानन्द के सम्पूर्ण काव्य को देखा जाए तो अधिकांशतः संयोग का वर्णन स्मरण के रुप में ही आया है जबकि वियोग वर्णन में कवि को अधिक सफलता मिली है। वस्तुतः प्रेम विरह की सभी दशाओं का वर्णन कवि ने अपने काव्य में बहुत ही तन्मयता के साथ किया है जिसमें कहीं भी संदेह नहीं है।

कवि घनानन्द के काव्य में विरह–वर्णन अद्वितीय है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है–''यद्यपि इन्होंने संयोग और वियोग दोनों पक्षों को लिया है पर वियोग की अन्त–दर्शाओं की ओर ही ध्यान अधिक है। इसी से इनके वियोग वर्णन के पद्य ही अधिक प्रसिद्ध हैं। वियोग वर्णन भी अधिकतर अन्तर्वृत्ति निरुपक ही है, बाह्यार्थ निरुपक नहीं।''1 इनके विरह–वर्णन की विविध दशाओं की अभिव्यक्ति इनके काव्य में देखने को मिलती है। जैसे एंकांकी प्रेम, विरह व्यथा, आन्तरिक वेदना और दशों दिशाओं आदि।

कवि घनानन्द और सुजान के सम्बन्ध में हमें जो कथा देखने को मिलती है। उससे पता चलता है कि, घनानन्द का प्रेम सुजान के प्रति एकांगी था। ऐसे प्रेम में प्रेमी के लिये एक मुख्य सहारा आत्म–समाधान का होता है। जब वह प्रेमी की निष्ठुरता, उपेक्षा आदि के विषय में जब सोचता है तब उसके सामने जैसे–तैसे अपने मन को समझाने के अलावा या कोई सहारा अथवा और कोई रास्ता नहीं दिखलाई देता है। इस आत्म–समाधान के द्वारा प्रेमी के विरह की पीड़ा कुछ कम हो जाती है किन्तु उसे पाने की आतुरता हमेशा बनी रहती है और जीवित रहने का एक सहारा मिलता है। घनानन्द की कविता में इस प्रकार के आत्म–समाधान के अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं। इसीलिए कवि घनानन्द इस काव्य पंक्ति में वह अपने मन को समझाते हुए बड़े स्पष्ट शब्दों में कहते हैं –

काहे को सोच करै जियरा, परि तोहि कहा विधि बातन की है।

वे घनानन्द स्याम सुजान, सम्हारि तू चातकि ज्यौं सुखि जी है।

जाकी कृपा नित छाय रही, दुख ताप ते बौरे बचाय ही ली है।।

ऐसी स्थिति में प्रेमी विरह की दशा में उसका मन बहुत चंचल हो जाता है जिसके कारण विरही व्यक्ति अपने मन को समझाने के लिए कभी तो अपनी प्रेमिका के पास अपना सन्देश भेजता है, कभी प्रिय का सन्देश लाने के लिए किसी दूसरे व्यक्ति से प्रार्थना करता है। ऐसी मनोदशा के कारण कवि घनानन्द ने कभी पवन तथा मेघ जैसे निर्जीव पदार्थों के द्वारा सन्देश भेजने अथवा मांगने की बड़ी रोमांचक कल्पना करता है। कालिदास का प्रसिद्ध ग्रन्थ 'मेघदूत' इसी प्रकार की कल्पना का द्योतक है। ऐसी स्थिति में कवि घनानन्द ने भी बादलों के माध्यम से अपनी पीड़ा प्रियतम तक पहुँचाई है और उनसे बड़ी विनम्रता के साथ याचना भी कर रहे हैं –

परकाजहिं देह कौ धारे फिरौ, परजन्म जथारथ व्है दरसौ।

निधि नीर सुधा के समान करौ, सब ही विधि सज्जनता सरसौ।।

घन आनन्द जीवन–दायक हौं, कछु मेरियौ पीर हीये परसौ।

कबहूं वा विसासी सुजान के आंगन, मों अंसुआन कौ लै बरसौ।।

इतना ही नहीं बल्कि कवि ने एक दूसरे छन्द में पवन से प्रार्थना की है कि वह उस प्रिय के पैरों की धूल को ले आए तो उसे पाकर कम से कम उसे जीवित रहने का कुछ सहारा मिल जाएगा –

''ए रे बीर पौन तेरौ सबै और गौन, वारि, तोसो ओर कौन, ननैं ढरकौंही बानि दे।''

बिरह विथा की मूरि, आँखिन में राखौं पूरि, तिन पायन की हा–हा नैकु आनिंदे।।''

यहाँ पर विरही व्यक्ति की मनोदशा ऐसी भी होती है का चित्रण करता है और वह अपनी दिनचर्या को प्रिय तक पहुँचा देना चाहता है। ऐसी मनोदशा के पीछे यही भावना रहती है कि प्रेमिका विरह की दीनदशा को देखकर शायद उसका हृदय द्रवित हो जाये और

उसकी विरह का कुछ न कुछ निराकरण निकल आए। घनानन्द के काव्य में आँखों की विरह का वर्णन बहुत अधिक हुआ है। इसका मुख्य कारण यह है कि मनुष्य की इन्द्रियों में मनुष्य की आन्तरिक भावना को सबसे अधिक सरलता एवं निश्च्छलता के साथ प्रकट करने वाली आँखें ही होती हैं। इन आँखों की अभिव्यक्ति पर मनुष्य का वश नहीं होता है। इसीलिए घनानन्द ने अपने एक सवैये में आँखों की स्थिति का बड़ी ही मनोहारी प्रस्तुति इन काव्य पंक्ति में अभिव्यक्त कर रहे हैं। यथा –

भौर तैं साँझ लौं कानन ओर निहारति बावरी नैकु न हारति।
साँझ ते भोर लौ तारनि–ताकिबो, तारनि सों इकतार न टारति।।

कवि ने आन्तरिक वेदना का चित्रण बड़ी चतुराई के सथ किया है क्योंकि विरह–वर्णन की अधिकतर अन्तर्वृत्ति बनती है जबकि बाह्य दशा नहीं बनती है। घनानन्द ने न तो बिहारी की तरह विरह ताप बाहर से नाप तौल की है और न उन्होने बाहरी उछल–कूद दिखाई है। इसीलिए जो कुछ हलचल है वह भीतर ही है, बाहर से वह विरह गम्भीर है। अतः न उसमें करवटें बदलना है, न सेज का आग की तरह तपना है न उछल–उछल कर भागना है। कवि की मौन पुकार ही उनके विरह का व्यंजक है। घनानन्द श्रृंगार के कवि हैं। इसीलिए वियोग श्रृंगार में इनकी वृत्ति अधिक रही है। इनके सम्बन्ध में डॉ. रामचन्द्र शुक्ल कहते हैं कि–''ये वियोग श्रृंगार के प्रधान मुक्तक कवि हैं।''2 इसीलिए कवि विरह की अभिव्यक्ति उनके काव्य में स्पष्ट दिखाई पड़ती है –

मौन हू सौं देखि हौं कितेक पन पालि हौ जू,
कूक–भरी मूकता बुलाय आप बोलि है।।

घनानन्द के काव्य में विरह की दशों दशाओं का चित्रण हुआ है। अतः उनके काव्य में विरह ताप, उन्माद, आवेग, स्मरण, रुदन, मरण, मूर्च्छा आदि का यत्र–तत्र वर्णन देखने को मिलता है। उन्माद और आवेग का एक उत्कृष्ट उदाहरण इस कविता में देखने को मिलता है। यथा –

अंतर हौं, किधौं अंत रहौ, दृग फारि फिरौं कि अभागिनि भोरों।
आगि नरौं अकि पानी परौं, अब कैसी करौं, हिय का विधि धीरौं।।

इसी प्रकार से इनके काव्य में स्मरण, अनिद्रा, रुदन और मरण के भी अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं। यहाँ पर रुदन का मनोहारी स्वरुप इस कविता में देखने को मिलता है –

रैन दिना धुटिबौ करैं प्रान, झरैं अंखियाँ दुखियाँ झरना सी।

काव्य शास्त्रीय दृष्टि से विरह के चार प्रकार हैं–पूर्व राग, मान, प्रवास और करुण है। घनानन्द के काव्य में यह चारों विरह देखे जा सकते हैं। प्रिय के मिलने से पूर्व उसके रुप तथा गुण श्रवण आदि से जो विरह उत्पन्न होता है, उसको ही पूर्व राग कहते हैं। वस्तुतः संयोग की स्थिति में जब प्रेमिका मान करके रुठ कर बैठ जाए और प्रेमी विरह का अनुभव करे तब मान विरह होता है। जब प्रिय के दूर चले जाने पर जो विरह उत्पन्न होता है, वही प्रवास विरह है। जब प्रेमी की विरह में मरणासन्न अवस्था हो जाती है तब विरह का करुण रुप दिखलाई पड़ता है। घनानन्द के विरह का करुण रुप यहाँ देखा जा सकता है

झूठी बतियान के पत्यान तें उदास व्हैं कै,
अब न घिरत घन आनन्द निदान कौं।
अधर लगे हैं आनि करके पयान प्रान,
चाहत चलन ये संदेसो ले सुजान कौं।

जब प्रेमिका की निष्ठुरता से खीझ कर कवि ने अनेक उपालम्भ दिये हैं और बड़े मार्मिक व्यंग्य भी किये हैं। इनमें कवि ने अपने मन की यथार्थ सत्य की अनुभूतियों को अभिव्यक्त किया है। यथा –

सो सुधि मो हिय मैं घन आनन्द सालति क्यों हूँ कढ़ै न कढ़ाई।
मीत सुजान अनीत की पाटी इते पै न जानिये कौने पढ़ाई।।

कवि घनानन्द का प्रिय इतना निष्ठुर है कि वह मन लेना तो जानता है परन्तु देना नहीं जानता। ऐसी अवस्था में कवि उलहाना देता है और बड़े ही स्पष्ट शब्दों में अपने हृदय उदगार प्रकट करता है –

तुम कौन सी पाटी पढ़े हौ लला,
मन लेहु पै देहु छटाँक नहीं।

कवि ने विरह–वर्णन में प्रकृति का उद्दीपन रुप में चित्रण किया है क्योंकि कोयल और चातक का स्वर नायिका को कष्ट देने वाला हो रहा है तब मोर का नृत्य और बादल की गर्जना भी उसके लिए दुःखदाई हो रही है –

कारी कूर कोकिल ! कहाँ को बैर काढ़ति री।
कूकि कूकि अबहीं करेजौ किन कोरि लै।
पैड़ परे पापी ये कलापी निसि–घौंस ज्यो ही,
चातक ! रे घातक व्है तू हू कान फोरि लै।।

घनानन्द के विरह में कातरता एवं आत्मोत्सर्ग का भाव विद्यमान है। कवि प्रिय के समक्ष अत्यन्त दैन्य एवं कातर स्वर में अपने दुःखों को कहता है। प्रेम के लिए कवि अनेक कष्ट उठाता है और अपने को बलिदान करने में भी नहीं डरता है –

आसा–गुन बांधि कै भरोसो–सिल धहर छाती,
पूरे पन–सिन्धु मैं न बूड़त सकाय हौं।
दीह दुख–दव हिय जारि उर अंतर,
निरन्तर यौं रोम–रोम त्रासनि तचाय हों।।

कवि घनानन्द ने रीति मुक्त काव्य परम्परा में रहकर ही अपनी कविता की रचना की है। इस सम्बन्ध में डॉ. शारीक कुमार ने लिखा है कि–''घनानन्द रीति मुक्त कवि आते हैं जिन्होंने स्वच्छन्द प्रेम की अभिव्यक्ति की है।''2 कवि घनानन्द स्पष्ट भाषा में कहते हैं कि वह कोई दबाव छिपाव नहीं रखते हैं। तभी तो आचार्य राम चन्द्र शुक्ला कहते हैं कि–''धनानन्द उन विरले कवियों में है जो भाषा की व्यंजना बढ़ाते हैं। अपने भावनाओं के अनेक रुप रंग की व्यंजना के लिए भाषा का ऐसा बेधड़क प्रयोग करने वाला पुराने कवियों में रघरा नहीं हुआ।''3

कवि प्रेमिका से अलग होने पर उसके मन में निरन्तर उसे पाने की अभिलाषा बनी रहती है। अतः प्रेमिका के निष्ठुर होने पर भी कवि उसकी हित–चिन्ता करता है। उसके विरह में स्वाभाविकता झलकती है जबकि प्रेमिका को अनेक उलहाने, व्यंग्य भी कवि ने किये हैं परन्तु उनमें प्रिय की हित–चिन्ता भी विद्यमान है। यथा –

नित नीके रहौ तुम्ह चाटु कहाय, असीस हमारियौं जीजिए जू।।4

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. डॉ. शिव कुमार शर्मा – हिन्दी साहित्य – युग और प्रवृत्तियाँ – 433
2. डॉ. शशि कुमार – सम्पादक – हिन्दी भाषा और साहित्य – 24
3. डॉ. शिव कुमार शर्मा – हिन्दी साहित्य – युग और प्रवृत्तियाँ – 433
4. घनानन्द काव्य।